लोकविज्ञान

विज्ञान समिति, उदयपुर

नवम्बर 2014

कार्बनिक यौगिकों का दैनिक जीवन में महत्त्व

कार्बन के यौगिक प्रकृति में बहुतायत से पाये जाते हैं। हम अपने दैनिक जीवन में भी विभिन्न कार्बनिक यौगिकों का उपयोग करते हैं उदाहरणतः अनाज, शक्कर, तेल, घी, दूध, चाय, कॉफी, औषधियाँ, रंजक, पेंट, कागज, लकड़ी, रसोई गैस, केरोसिन, पेट्रोल, डीजल, प्लास्टिक, कपड़ा, साबुन, डिटर्जेन्ट आदि । वस्तुतः कार्बन के यौगिकों की संख्या अन्य सभी तत्वों द्वारा बनाये गये यौगिकों की संख्या से कई गुना अधिक है। इसका प्रमुख कारण कार्बन में शृंखलन गुण का पाया जाना है जिसमें कार्बन-कार्बन बंध की दीर्घ शृंखला बनती है। यह गुण अन्य तत्वों में बहुत कम पाया जाता है।

कार्बन के अपररूप (Allotropes of Carbon)

शक्कर ($C_{12}H_{22}O_{11}$) को सांद्र सलफ्यूरिक अम्ल से क्रिया करवाने पर काला पदार्थ बनता है उसे शुगर चारकोल कहते हैं। यह कार्बन का शुद्ध रूप हैं। इसे ऑक्सीजन की उपस्थिति में जलाने पर कार्बन डाइ ऑक्साइड प्राप्त होती है। इसी प्रकार शुष्क सेल (Dry Cell) की ग्रेफाइट छड़ को जलाने पर भी कार्बन डाइ ऑक्साइड बनती है। कोयला जलने पर यही गैस देता है। अतः चारकोल, ग्रेफाइट तथा कोक तीनों ही कार्बन के प्रतिरूप हैं।

हीरा – यह कार्बन का अतिशुद्ध रूप है। हीरे की खदानें विश्व के कई देशों में स्थित हैं। दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील, अमेरिका में कई स्थानों पर हीरे की खानें हैं। भारतवर्ष में हीरा मध्यप्रदेश में पन्ना स्थित खानों से निकाला जाता है।

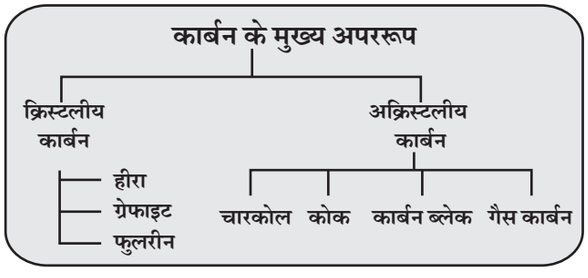

संरचना – इसकी संरचना में प्रत्येक कार्बन परमाणु चतुष्फलकीय ज्यामिति में स्थित चार अन्य कार्बन परमाणुओं से एकल बंध द्वारा जुड़ा होता है जिससे एक त्रिविमीय ज्यामिति आकृति प्राप्त होती है। कार्बन की संयोजकता चार होती है तथा प्रत्येक कार्बन परमाणु चार अन्य कार्बन परमाणुओं से एक बंध से जुड़ा होता है। अतः इस संरचना में कार्बन परमाणु के पास मुक्त इलेक्ट्रॉन नहीं होते हैं और हीरा विद्युत का कुचालक होता है। त्रिविमीय ज्यामिति के कारण इसमें C-C सहसंयोजक बंध की वृहद संरचना होती है। अतः हीरा अति कठोर होता है।

उपयोग – हीरा अत्यन्त चमकीला होता है। अतः इसका उपयोग आभूषण बनाने में किया जाता है। यह अत्यधिक कठोर होता है। अतः इसका उपयोग कांच, चट्टाने, संगमरमर आदि काटने के औजार बनाने में किया जाता है। इसका उपयोग अन्य मूल्यवान गहनों पर पॉलिश करने हेतु किया जाता है।

ग्रेफाइट (Graphite) – ग्रेफाइट प्रकृति में बहुतायत से पाया जाता है। श्रीलंका, नेपाल, साइबेरिया, केलिफोर्निया, चेकोस्लोवाकिया तथा भारत में ग्रेफाइट के विशाल भंडार है। भारतवर्ष में ग्रेफाइट, उड़ीसा, राजस्थान, प.बंगाल तथा कश्मीर में मिलता है।

संरचना – ग्रेफाइट की संरचना परतीय होती है। इस संरचना में प्रत्येक कार्बन परमाणु तीन अन्य परमाणुओं से जुड़ा होता है तथा षट्कोणीय वलय का निर्माण करता है। प्रत्येक कार्बन परमाणु के चार संयोजकता इलेक्ट्रॉन होते हैं। उनमें से तीन इलेक्ट्रॉन तो तीन कार्बन परमाणुओं के साथ सहसंयोजक बंध बनाने में प्रयुक्त होते हैं, चौथा इलेक्ट्रॉन कार्बन परमाणुओं के मध्य दुर्बल आंशिक द्विबंध बनाता है। इस कारण ग्रेफाइट में कार्बन-कार्बन बंध दैर्ध्य डायमंड के कार्बन-कार्बन बंध दैर्ध्य से कम होती है। साथ ही मुक्त इलेक्ट्रॉन के कारण ग्रेफाइट विद्युत का सुचालक है। ग्रेफाइट के तल आपस में अति दुर्बल बलों से, जिन्हें वांडरवाल बल कहते हैं जुड़े रहते हैं। दाब लगाने पर ये तल एक दूसरे पर फिसलते हैं। इसी कारण ग्रेफाइट मृदु होता है तथा कागज पर निशान लगा सकता है। मृदु एवं फिसलन प्रकृति का होने के कारण ग्रेफाइट को स्नेहक के रूप में उपयोग में लेते हैं। ग्रेफाइट विद्युत का सुचालक होता है। अतः इसे शुष्क सेल में भी प्रयोग में लेते हैं। पेन्सिल, क्रुसीबल तथा इलेक्ट्रोड बनाने में इसका उपयोग होता है।

फुलरीन – कार्बन का एक और क्रिस्टलीय अपररूप फुलरीन है, जिसकी खोज 1985 में हुई । फुलरीन के एक अणु में 60, 70, अथवा अधिक कार्बन परमाणु होते हैं। फुलरीन की संरचना एक गोलाकार गुम्बद की तरह होती है। इसी कारण इसका नाम अमेरिका के एक प्रसिद्ध वास्तुशिल्पी बकमिस्टर फुलरीन के नाम पर दिया गया है। C_{60} फुलरीन सर्वाधिक स्थाई है तथा इसे बकमिस्टर फुलरिन अथवा बकीबॉल कहा जाता है। इसके 32 पृष्ठ होते हैं, जिसमें 20 पृष्ठ षटकोणीय होते हैं अथवा 12 पृष्ठ पंचकोणीय होते हैं। फुलरीन कम स्थाई होता है। C_{60} फुलरीन के क्षार धातुओं के साथ बने यौगिक उच्च ताप पर विद्युत के अतिचालक होते हैं। अतः ये यौगिक तकनीकी दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। ●

सम्पादन-संकलन प्रो. एन. एल. गुप्ता, श्री प्रकाश तातेड़, डॉ. के.एल. मेनारिया, डॉ. एल.एल. धाकड़, डॉ. के. एल. तोतावत

विज्ञान समिति, रोड़ नं. 17, अशोकनगर, उदयपुर - 313 001 दूरभाष : 0294-2413117, 2411650

Website : www.vigyansamitiudaipur.org, E-mail : samitivigyan@gmail.com

टेस्ट ट्यूब बेबी : विज्ञान का वरदान

जब प्रजनन तकनीक की अन्य पद्धतियां असफल हो जाती हैं, तो आईवीएफ बंध्यता का एक प्रमुख उपचार है। कृत्रिम परिवेशी निषेचन (आईवीएफ) वह प्रक्रिया है जिसमें गर्भाशय से बाहर, अर्थात इन विट्रो यानि कृत्रिम परिवेश में, शुक्राणुओं द्वारा निषेचन किया जाता है। इस प्रक्रिया में डिम्बक्षरण प्रक्रिया को हार्मोन द्वारा नियंत्रित करते हुए स्त्री की डिम्बग्रंथि से डिम्ब (अंडाणु) निकाल कर एक तरल माध्यम में शुक्राणुओं द्वारा उनका निषेचन करवाया जाता है। इसके बाद सफल गर्भाधान को स्थापित करने के उद्देश्य से इस निषेचित अंडाणु (जाइगोट) को महिला के गर्भाशय में स्थानांतरित कर दिया जाता है। प्रथम सफल ''टेस्ट ट्यूब शिशु'' लुइस ब्राउन का जन्म 1978 में हुआ था । उससे पहले ऑस्ट्रेलियन फॉक्सटन स्कूल के शोधकर्ताओं ने 1973 में एक अस्थायी जैव-रासायनिक की और 1976 में स्टेप्टो और एडवर्ड्स ने एक बहिगर्भाशयिक गर्भाधान की घोषणा की थी।

आईवीएफ (IVF) प्रक्रिया की मदद से जन्म लेने वाले बच्चों के लिए एक आम शब्द है टेस्ट ट्यूब बेबी, जिसका कारण रसायन विज्ञान और जीव विज्ञान की प्रयोगशालाओं में कांच या प्लास्टिक रेजिन के बने नली के आकार के कंटेनर हैं, **जिन्हें टेस्ट ट्यूब (परखनली)** कहा जाता है।

आईवीएफ (IVF)का उपयोग डिम्बवाही नलिका की समस्याओं के कारण स्त्रियों में होने वाली बंध्यता के उपचार के लिए किया जा सकता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में शरीर के भीतर(in vivo) निषेचन मुश्किल हो जाता है। यह विधि पुरुष बंध्यता में भी सहायक हो सकती है, जहां शुक्राणुओं की गुणवत्ता में खराबी से और ऐसे मामलों में इंट्रासाइटोप्लास्मिक स्पर्म इंजेक्शन (ICSI) का उपयोग किया जा सकता है, जहां एक शुक्राणु कोशिका को सीधे डिम्ब कोशिका में इंजेक्ट किया जाता है। यह विधि तब इस्तेमाल की जाती है जब शुक्राणुओं को डिम्ब में प्रवेश करने में समस्या होती है और इन स्थितियों में जीवन साथी या दानकर्ता के शुक्राणुओं को डिम्ब में प्रवेश करने में समस्या होती है और इन स्थितियों में जीवन साथी या दानकर्ता के शुक्राणुओं का भी उपयोग किया जा सकता है। आईसीएसआई (ICSI) की सफलता की दर आईवीएफ (IVF) निषेचन की सफलता की दर के बराबर होती है।

यह कहना आसान है कि आईवीएफ (IVF) की सफलता के लिए बस स्वस्थ अंडाणु, निषेचित करने वाले शुक्राणु और गर्भाधान करने वाले एक गर्भाशय की आवश्यकता होती है। लेकिन इस प्रक्रिया की उच्च लागत के कारण आम तौर पर आईवीएफ (IVF) का प्रयास अन्य सारे सस्ते विकल्पों के विफल होने के बाद ही किया जाता है।

डिम्ब व शुक्राणु की तैयारी

प्रयोगशाला में, पहचाने गए डिम्बों से उनके इर्द गिर्द की कोशिकाएं निकाल कर डिम्बों को निषेचन के लिए तैयार किया जाता है। सफल गर्भाधान के अनुकूलतम अवसरों वाले डिम्ब चुनने के लिए निषेचन से पहले डिम्बाणुजनकोशिका का चयन किया जा सकता है। इस बीच वीर्य को निषेचन हेतु तैयार करने के लिए उसमें से निष्क्रिय कोशिकाओं और वीर्य द्रव को निकाल दिया जाता है । इस प्रक्रिया को शुक्राणु धावन कहते हैं। यदि वीर्य किसी शुक्राणु दानदाता द्वारा उपलब्ध कराया गया है, तो उसे उपचार के लिए तैयार करने के बाद जमाया और रोगाणुरहित किया जाएगा और उपयोग के लिए तैयार करने हेतु उसे पिघलाया जाएगा ।

निषेचन– शुक्राणु और अंडाणु को लगभग 18 घंटों तक 75000:1 के अनुपात में संवर्धन माध्यम में इनक्यूबेट किया जाता है। अधिकांश स्थितियों में, इस समय तक अंडाणु निषेचित हो जाता है और निषेचित अंडाणु दो प्रोन्यूक्लिस दिखाता है। कुछ स्थितियां, जैसे न्यून शुक्राणु संख्या या गतिशीलता, में इंट्रासाइटोप्लास्मिक स्पर्म इंजेक्शन का उपयोग करके एक शुक्राणु को सीधे अंडाणु में इंजेक्ट किया जा सकता है। निषेचित अंडाणु को विशेष विकास माध्यम में रख कर लगभग 48 घंटों के लिए छोड़ दिया जाता है जब तक कि अंडाणु में छः से आठ कोशिकाएं न बन जाएं।

गैमिट इंट्रोफैलोपियन हस्तांतरण विधि में, अंडाणुओं को स्त्री के शरीर से निकाल कर उन्हें पुरुष के शुक्राणु के साथ स्त्री की किसी एक डिम्बवाही नली में रख दिया जाता है। इससे स्त्री के शरीर के भीतर निषेचन की प्रक्रिया संपन्न होती है। इसलिए, यह विविधता वास्तव में इन विवों निषेचन है, न कि कृत्रिम परिवेशी निषेचन ।

भ्रूण संवर्धन–आम तौर पर भ्रूण को पुनः प्राप्ति के 6–8 कोशिका की अवस्था में पहुंचाने तक संवर्धित किया जाता है। हालांकि कई कनाड़ाई, अमेरिकी और ऑस्ट्रेलियाई कार्यक्रमों को एक लंबी संवध्रन प्रणाली में रखा जाता है और स्थानांतरण ब्लास्टोसिस्ट चरण में पुनः प्राप्ति के करीब पांच दिन बाद किया जाता है। खास कर यदि तीसरे दिन भी कई उच्च गुणवत्ता वाले भ्रूण उपलब्ध हों। यह देखा गया है कि ब्लास्टोसिस्ट चरण स्थानांतरणों के परिणाम स्वरूप गर्भाधान की दरें ऊंची होती हैं।

जटिलताएं – आईवीएफ(IVF) की प्रमुख जटिलता है एक गर्भ में एक से अधिक शिशुओं का जन्म होना। यह घटना भ्रूण हस्तांतरण के दौरान एक से अधिक भ्रूणों को हस्तांतरित करने की प्रथा से सीधी जुड़ी हुई है। एकाधिक जन्म के साथ गर्भपात, प्रसूतिक जटिलताएं, समय पूर्व जन्म और दीर्घकालिक क्षति की संभावना के साथ नवजात शिशु की अस्वस्थता के खतरे बढ़ जाते हैं। एकाधिक गर्भाधान (ट्रिप्लेट या अधिक) के खतरे को घटाने के लिए कुछ देशों (जैसे इंग्लैंड) ने हस्तांतरित किए जाने वाले भ्रूणों की संख्या पर सीमाएं लागू की हैं, लेकिन इन सीमाओं का सभी स्थानों पर

शेष पृष्ठ 3 पर....

ब्लड टेस्ट बताएगा कब तक जीएंगे आप !

अब रक्त की जांच से पता चल जाएगा कि आप कब तक जीएंगे। हाल ही में एक शोध में बताया गया है कि एक सस्ते से ब्लड टेस्ट से पता चल सकता है कि किस व्यक्ति को दिल की बीमारी बढ़ने का खतरा है, साथ ही इससे आपको अपनी जिंदगी कब तक रहेगी, यह भी पता चल जाएगा । अमेरिका इंटरमाउंटेन मेडिकल सेंटर हार्ट इंसिटट्यूट के शोधकर्ताओं ने हारवर्ड के ब्रिघम और बोस्टन के महिला वैज्ञानिकों के साथ मिलकर कंप्लीट ब्लड काउंट (सीबीसी) के रिस्क स्कोर पर एक नई स्टडी की है, जिसका इस्तेमाल सामान्य ब्लड टेस्ट में होता है । वैज्ञानिकों का कहना है कि अभी तक ब्लड टेस्ट से कई रोगों और शरीर में पोषक तत्वों की मात्रा के बारें में ही पता लग पाता था ।

साइंस डेली के मुताबिक, डॉक्टर सालों से सीबीसी लेब टेस्ट का इस्तेमाल करते आ रहें हैं, लेकिन वे यह नहीं जान पाए थे कि इसके सभी घटक जीवनकाल के बारे में भी जानकारी दे सकते हैं। सीबीसी के मानक विधि के तौर पर प्रयोग करके डॉक्टर भविष्य में रोगी की मौत का कारण बनने वाली बीमारियों का पता करके उन्हें बेहतर उपचार दे सकते हैं । उन्होंने बताया कि स्वस्थ लोगों के अलावा यह ज्यादा जोखिम वाले मरीजों की पहचान करने के साथ-साथ किस मरीज पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए, इसकी पहचान करने में भी डॉक्टरों की मदद करेगा । ●

पृष्ठ 2 का शेष ....

पालन नहीं किया जाता है । हस्तांतरण के बाद गर्भाशय में भ्रूणों का सहज विभाजन हो तो सकता है, लेकिन यह बहुत कम होता है और इससे एक समान जुडवां शिशु जन्म लेते हैं।

डिम्बाशयी उद्दीपन का एक अन्य खतरा है ओवेरियन हाइपरस्टीम्युलेशन सिंड्रोम विकसित होना, खास कर जब ''डिम्बोत्सर्जन को ट्रिगर या आरंभ'' करने के लिए एचसीजी का उपयोग किया गया हो।यदि अंतर्निहित बंध्यता शुक्राणु जनन क्रिया में असमानताओं से जुड़ी हो, तो यह संभव है नर शिशु में शुक्राणु असमानताओं का अधिक जोखिम हो सकता है, लेकिन इतने छोटे शिशु में इसका परीक्षण नहीं किया जा सकता है। 9–18 वर्ष के आईवीएफ(IVF) शिशुओं पर किए गए अध्ययनों के अनुसार आईवीएफ द्वारा गर्भधारण करने से जन्में शिशुओं का व्यवहार और उनकी सामाजिक भावनात्मक कार्य पद्धतियां समग्र रूप से सामान्य होती है। ●

सूर्योदय में जो नाटक है, जो सौंदर्य है, जो लीला है, वह और कहीं देखने को नहीं मिल सकती ; ईश्वर सरीखा दूसरा सूत्रधार नहीं मिल सकता; और आकाश से बढ़ कर भव्य रंगभूमि दूसरी नहीं मिल सकती।

– महात्मा गाँधी

लकवा अब लाइलाज नहीं

शल्य चिकित्सा के नये आयाम

असाध्य स्पाइनल कॉर्ड लकवा

अब तक पक्षाघात (लकवा) से पीड़ित लोगों को कष्टमय नारकीय जीवन जीने के लिए मजबूर रहना पड़ता था । चलना, फिरना, उठना-बैठना, हाथ पांवों का हिलना डुलना पूर्ण/ आंशिक रूप से अपंग बना देता था, किन्तु हाल ही में ब्रितानी और पोलेण्ड मूल के दो डॉक्टरो ने मिलकर एक ऐसी शल्य चिकित्सा पद्धति विकसित की है जिससे इस कष्टमय शारीरिक व्याधि से निजात पाने में आशा की किरण दिखलायी दी है।

डरेक के लकवे का इलाजः

बलगेरिया के एक 38 वर्षीय अग्निशामक कर्मचारी डरेक फिडयेका के पीठ पर 2010 में चाकू से भयंकर वार हुआ था जिससे उसके मेरुरज्जु (स्पाइनल कॉर्ड) पर प्रतिकूल प्रभाव से पक्षाघात हुआ, डरेक का चलना फिरना बाध्य हुआ और व्हील चेयर पर ही निर्भर रहने पर मजबूर होना पड़ा। वह अपने शरीर के निचले भाग जननेन्द्रियों और पैरों पर नियंत्रण पूर्णतया खो चुका था ।

स्नायु शल्य चिकित्सक

पोलेंड के शल्य चिकित्सक पावेल टबाको और लन्दन इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूरोलॉजी के ज्यफ्रे राइसमन ने मिलकर स्पाइनल कॉर्ड के स्नायु तंत्रिका की कोशिकाओ के पुननिर्माण से डेरेक ने क्षतिग्रस्त अंगों में नयी जान फूंक दी। डेरेक अब अपने कूल्हों को हिला डुला सकता है और छड़ी के सहारे चल फिर भी सकता है।

पक्षाघात से निजात कैसे संभव हुई

सामान्यतया स्पाइनल कॉर्ड की मृत कोशिकाओं का मानव शरीर में नवीनीकरण नहीं होता किन्तु नाक की केविटी के ओल्फेक्ट्री बल्व में कुछ ऐसी स्नायु कोशिकाएं होती है जिनका नवीनीकरण होता रहता है, शल्य चिकित्सकों ने इन्हीं कोशिकाओं का प्रत्यारोपण, स्पाइनल कॉर्ड के क्षतिग्रस्त स्थल पर कर नवीन स्नायु कोशिकाओं का निर्माण किया और स्नायुतंत्र को पुनः जाग्रत किया। इसी नवविकसित शल्य तकनीक के विकास के लिए एक करोड़ पौंड की व्यवस्था की गयी है और वर्तमान में इसी प्रकार के दस अन्य पक्षाघात रोगियों का इलाज चल रहा है।

- डॉ. के.एल. मेनारिया

लोकविज्ञान के पूर्व अंक से –
जुलाई 1973

खाने की आदतें और मिथ्या धारणाएं

भोजन के संबंध में हर व्यक्ति अपनी आदतें और अवधारणा रखता है। अक्सर हमारे घरों में बालक और बालिकाओं में रुचियों की भिन्नता देखी जा सकती है। हर सदस्य एक विशेष तरह का खाना खाने पर जोर देता है और उसमें किसी भी तरह के परिवर्तन को कठिनता से स्वीकार करता है। भोजन, आराम और आत्मसंतुष्टि, संतोष और सुरक्षा का प्रतीक है । भोजन संबंधी आदतें बालक के जन्म से ही प्रारम्भ होती है। अतः उसकी इन आदतों को सही दिशा देने का कार्य भी प्रारम्भिक अवस्था से किया जाना चाहिये। बड़े होने पर उन आदतों से छुटकारा पाना आसान नहीं है। परम्परागत रूप से भोजन सम्बन्धी सभी आदतें खराब नहीं होती और जो आदतें हैं उन्हें एकदम बदला नहीं जा सकता तथा उनमें त्याज्य भोज्य का शनैः शनैः परिवर्तन करना होता है।

खाने के बारे में गलत अवधारणाएं पालन करने वाले इस भ्रम में जीते हैं कि उनका भोजन सम्बन्धी ज्ञान सही है और वे उसे स्वास्थ्य के लिए उपयोगी समझते हैं। ऐसी कई धारणाएं हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख ही समसामयिक होगा ।

कुछ लोगों की यह धारणा है कि अमुक खाना तो गर्म है और अमुक खाना शरीर के लिए ठण्डा है और ऐसे खानों को बीमारी या अस्वस्थता के समय नहीं खाना समीचीन होगा ।

दूसरा किसी भी तरह की बीमारी में खट्टी, चिकनी या अचार जैसी चीजों की मनाही रहती है जबकि कम से कम ये बातें सभी बीमारियों के लिए समान रूप से लागू करना सही नहीं है।

तीसरा खट्टे फल, टमाटर आदि में बहुत तेजाब होता है जो हमारे शरीर को काट देता है। यह अवधारणा निराधार है।

अक्सर यह भी धारणा प्रचलित है कि गर्म खाने के ठीक बाद ठंडी चीज का उपयोग वर्जित है।

इसी प्रकार दूध के साथ दही का प्रयोग और दूध के साथ फल के रस का प्रयोग वर्जित समझा जाता है। वास्तव में देखा जाए तो इन धारणाओं के पीछे कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

कुछ लोग ब्राह्मी आंवला और बादाम को मस्तिष्कवर्द्धक मानते हैं जबकि वैज्ञानिक आधार पर इसे सही नहीं माना जा सकता ।

इस प्रकार कुछ खाद्य पदार्थों के संबंध में यह भी भ्रम है कि विशेष प्रकार की चीजें खून साफ करने के लिए उपयुक्त है। ऐसी कितनी ही गलत धारणाएं हैं जो हमारे समाज में प्रचलित हैं।

खाने संबंधी आदतें धीरे-धीरे इतनी दृढ़ हो जाती है कि वे सनकीपन का रूप धारण कर लेती हैं। सनकीपन की इन आदतों को परिपोषित करने में हमारी परम्परा, धार्मिक विचार, सस्ता साहित्य और अन्य प्रचारात्मक तरीकों का हाथ रहता है। अक्सर लोग बिना किसी लाभ प्राप्ति के राय देते रहते हैं कि खाने के साथ सुन्दरता, आँख की बनावट, बालों का बढ़ना, गिरने से रोकथाम आदि कितनी ही बातों का संबंध जोड़ते रहते हैं और इसलिए कई लोग सनकीपन से इनका बहुतायत से उपयोग भी करते हैं।

चूंकि इन आदतों का उद्भव बालपन से ही होता है अतः इन गलत आदतों से छुटकारा दिलाने का भी यह उपयुक्त समय है। प्रारम्भ से ही हमें बालकों को इस तरह की गलत धारणाओं के शिकार होने से रोकना चाहिए और हमें खाने सम्बन्धी इन निरर्थक अवधारणाओं का निराकरण करना चाहिए । इसमें खाने के प्रति उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण पनपेगा । घर में माता-पिता और हर एक जिम्मेदार सदस्य का यह कर्त्तव्य है कि वे इन निरर्थक अवधारणाओं से मुक्ति लें और अपने बच्चों का भी सही मार्ग-दर्शन करें।

खाने संबंधी आदतों का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि, अनुभव एवं स्वाभाविक अवसरों, शैक्षिक तैयारी आदि का प्रभाव अनिवार्यतः पड़ता है। आयु, जाति तथा वर्ग भी अपना प्रभाव खाने की दशा व दिशा निर्धारण के प्रभावी कारण होते हैं।

नॉनस्टिक कुकवेयर : सेहत के दुश्मन

आपने शायद ही कभी सोचा होगा कि आपके रसोइघर का प्रिय मित्र'नॉनस्टिक कुकवेयर' आपके परिवार के स्वास्थ्य का दुश्मन हो सकता है। वैज्ञानिक शोध से यह तथ्य सत्य सिद्ध हुआ है कि नॉनस्टिक बर्तन से 5 मिनट में छः विषैली गैसें उत्सर्जित होती है। नॉनस्टिक बर्तनों के निर्माण में कैंसर उत्पादक रसायन **परफ्लुरो ऑक्टेनॉइक एसिड (PFOA)** का उपयोग किया जाता है जो हर बार उपयोग करने पर हानिकारक धुआं उत्पन्न करता है जो हमारे स्वास्थ्य को अत्यधिक नुकसान पहुंचाता है। अधिक ताप पर नॉनस्टिक कुकवेयर की परत PFIB एवं WW II रसायनों में परिवर्तित हो जाती है जो कि फॉस्जिन गैस जैसे हानिकारक है। नॉनस्टिक पात्रों में प्रयुक्त PFOA रसायन के गर्भवती महिलाओं पर अनेक दुष्प्रभाव ज्ञात हुए हैं। यह रसायन पक्षी व अन्य जीवों के लिए भी हानिप्रद है। शोध में ज्ञात हुआ है कि 90 प्रतिशत अमेरिकन नागरिकों के रक्त में PFOA पाया गया। यह रसायन एक बार शरीर में प्रवेश कर जाए तो उसे वापस बाहर आने में 5–10 वर्ष लग जाते हैं। नॉनस्टिक बरतन पर छोटी सी भी खरोंच आ जाए तब इसका उपयोग और अधिक घातक हो जाता है क्योंकि तब उसमें से हानिकारक रसायन आसनी से बाहर आकर खाद्य सामग्री में मिल जाते हैं।

स्रोत : इंटरनेट

सौजन्य : डॉ. जी.सी लोढ़ा, पूर्व निदेशक,स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विभाग, राजस्थान सरकार
होम्योपेथिक एवं ऐलोपेथिक कन्सलटेंट, 5 डी, न्यू फतहपुरा, उदयपुर फोन : 0294-2417739